गोरा

अध्याय 4

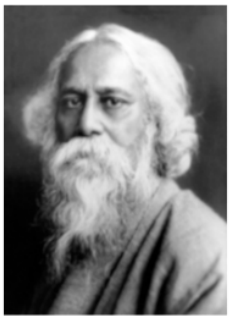

रविंद्रनाथ टैगोर

गोरा

अध्याय 4

https://www.hindiadda.com/gora-part-iv/

परेशबाबू के घर से निकलकर विनय और गोरा सड़क पर आ गए तो विनय ने कहा, "गोरा, ज़रा धीरे-धीरे चलो भई.... तुम्हारी टाँगे बहुत लंबी हैं,इन पर कुछ अंकुश नहीं रखोगे तो तुम्हारे साथ चलने में मेरा दम फूल जाएगा।!"

गोरा ने कहा, "मैं अकेला ही चलना चाहता हूँ- मुझे आज बहुत-कुछ सोचना है।" यह कहता हुआ वह अपनी स्वाभाविक तेज़ चाल से आगे बढ़ गया।

विनय के मन को चोट लगी। उसने आज गोरा के विरुध्द विद्रोह करके उसका आदेश भंग किया है, इसे लेकर अगर गोरा के विरुध्द विद्रोह करके उसका आदेश भंग किया है, इसे लेकर अगर गोरा डाँट देता तो उसे खुशी ही होती। उनकी पुरानी दोस्ती के आकाश पर जो घटा घिर आई है,एक बौछार हो जाने से उसकी उमस मिट जाती है और वह फिर चैन की साँस ले सकता।

इसके सिवा एक और बात से भी उसे तकलीफ हो रही थी। गोरा ने परेशबाबू के घर सहसा आज पहले-पहल आकर विनय को वहाँ पुराने परिचित की तरह बैठा देखकर ज़रूर यह समझा होगा कि विनय यहाँ बराबर आता-जाता रहता है। यह बात नहीं है कि आने-जाने में कोई बुराई है;गोरा चाहे जो कहे, परेशबाबू के सुशिक्षित परिवार के साथ अंतरंग परिचय होने के सुयोग को विनय एक विशेष लाभ ही समझता है, इनसे मिलने-जुलने में गोरा को कोई बुराई दीखे तो वह उसकी निरी पोंगापंथी है। लेकिन पहले की बातचीत से तो गोरा यही समझता रहा होगा कि परेशबाबू के घर विनय आता-जाता नहीं है; हो सकता है कि आज अचानक उसके मन में यह बात आई हो कि वह जो समझा था झूठ था। वरदासुंदरी उसे खास तौर से कमरे में बुला ले गईं और उनकी लड़कियों से वहाँ उसकी बातचीत होती रही- गोरा की तीखी दृष्टि से यह बात ओझल न रही होगी। लड़कियों से ऐसे मिल-बैठकर और वरदासुंदरी की आत्मीयता से विनय ने मन-ही-मन एक गौरव और आनंद का अनुभव किया था- किंतु इसके साथ ही गोरा के और उसके साथ इस परिवार के बर्ताव का भेदभाव भीतर-ही-भीतर उसे अखर भी रहा था। आज तक इन दोनों सहपाठियों के बंधुत्व में कोई बात अड़चन बनकर नहीं आई थी। सिर्फ एक बार गोरा के ब्रह्म-समाज के उत्साह को लेकर दोनों की दोस्ती पर कुछ दिन के लिए एक धुंधली छाया सी पड़ गई थी- किंतु जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, विनय के निकट मत नाम की चीज़ कोई बहुत महत्व की नहीं थी; मत को लेकर वह चाहे जितना लड़-झगड़ ले, अंतत: उसके लिए मनुष्य ही अधिक बड़ा सत्य था। उन दोनों की दोस्ती में इस बार मनुष्य ही आड़े आते दीख रहे हैं, इससे वह डर गया। परेशबाबू के परिवार के साथ संबंध

जुड़ने को विनय मूल्यवान समझता है, क्योंकि अपने जीवन में ऐसे आनंद का अवसर उसे और कभी नहीं मिला- किंतु गोरा का बंधुत्व भी विनय के जीवन का अभिन्न अंग है, उसके बिना जीवन की वह कल्पना ही नहीं कर सकता।

विनय ने अभी तक किसी दूसरे व्यक्ति को अपने हृदय के उतना निकट नहीं आने दिया था जितना गोरा को। आज तक वह किताबें पढ़ता रहा है और गोरा के साथ बहसबाज़ी करता रहा है, झगड़ता भी रहा है गोरा को ही प्यार भी करता रहा है; दुनिया में और किसी चीज़ की तरफ ध्यान देने का उसे अवकाश ही नहीं मिला। गोरा को भी भक्त-सम्प्रदाय की कमी नहीं थी, किंतु बंधु विनय को छोड़कर दूसरा नहीं था। गोरा की प्रकृति में एक नि:संगता का भाव है- इधर वह जन-साधारण से मिलने से नहीं हिचकिचाता, उधर तरह-तरह के लोगों से घनिष्ठता करना भी उसके लिए सर्वथा असंभव है। अधिकतर लोग उसके साथ एक दूरी का अनुभव किए बिना नहीं रहते।

आज विनय की समझ में यह आ गया कि परेशबाबू के परिवार की ओर उसके हृदय में गहरा अनुभाग उत्पन्न हो गया है, हालाँकि परिचय अधिक दिन का नहीं है। इससे गोरा के प्रति मानो कोई अपराध हो गया है, यह सोचकर वह लज्जित होने लगा।

आज वरदासुंदरी ने विनय को अपनी लड़कियों की अंग्रेज़ी कविता और शिल्प का काम दिखाकर और कविता सुनवाकर मातृत्व का जो प्रदर्शन किया वह गोरा के निकट कितना अवहेलना योग्य है, इसकी मन-ही-मन विनय स्पष्ट कल्पना कर सकता था। इसमें सचमुच हँसी की बात भी कम नहीं थी, और जो थोड़ी-बहुत अंग्रेज़ी वरदासुंदरी की लड़कियों ने सीख ली है, अंग्रेज़ मेमों से प्रशंसा पाई है और लैफ्टिनेंट-गवर्नर की पत्नी का क्षणिक साथ पाया है, इस सबके गरूर की ओट में एक तरह की दीनता भी छिपी थी। किंतु यह सब समझ-बूझकर भी विनय गोरा के आदर्श के अनुसार इन बातों से घृणा नहीं कर सका। यह सब उसे अच्छा ही लगा था। लावण्य-जैसी लड़की- देखने में बड़ी सुंदर है, इसमें कोई संदेह नहीं। अपने हाथ की लिखी मूर की कविता विनय को दिखाकर बड़ा अभिमान कर रही थी, इससे विनय के अहंकार की भी तृप्ति हुई थी। स्वयं वरदासुंदरी आधुनिकता के रंग में पूरी तरह रँग नहीं गई हैं फिर भी अतिरिक्त उत्साह से आधुनिकता दिखाने में व्यस्त हैं.... इस असंगति की ओर विनय का ध्यान न गया हो सो बात नहीं थी, फिर भी वरदासुंदरी उसे बहुत भली लगी थीं। उनके अहंकार और असहिष्णुता का भोलापन ही विनय को प्रीतिकर जान पड़ा। लड़कियाँ अपनी हँसी से कमरे का वातावरण मधुर किए रहती हैं,

चाय बनाकर स्वागत करती हैं, अपने हाथ की कारीगरी से कमरे की ओर दीवारें सजाती हैं, और इसके साथ ही अंग्रेज़ी कविता पढ़कर उसमें रस लेती है, यह कितनी भी साधारण बात क्यों न हो, विनय इसी पर मुग्ध है। अपने बहुत कम लोगों से मिलने-जुलने वाले जीवन में ऐसा रस पहले कभी उसे नहीं मिला था। इन लड़कियों की हँसी-मज़ाक, वेश-भूषा, काम-काज के कितने मधुर चित्र मन-ही-मन वह ऑंकने लगा, इसकी सीमा नहीं थी। केवल किताबें पढ़ने और सिध्दांतों को लेकर बहस करने के अलावा जिसने यह भी नहीं जाना कि उसने कब यौवन में पदार्पण किया, उसके लिए परेशबाबू के इस साधारण परिवार के भीतर भी मानो एक नया और अचरज-भरा जगत प्रकाशित हो उठा।

गोरा जो विनय का साथ छोड़कर नाराज़ होकर आगे चला गया उस नाराजी को विनय अन्याय नहीं मान सका। दोनों दोस्तों की बहुत दिन पुरानी दोस्ती में इतने अरसे बाद आज सचमुच यह व्याघात उपस्थिति हुआ है।

बरसात की रात के स्तब्ध अंधकार को भंग करते हुए बादल बीच-बीच में गरज उठते थे। विनय अपने मन पर एक बहुत भारी बोझ का अनुभव कर रहा था। उसे लग रहा था, उसका जीवन चिरकाल से जिस राह पर बढ़ा जा रहा था आज उसे दोड़कर दूसरी नई राह पकड़ रहा है। इस अंधकार में गोरा न जाने किधर चला गया, और वह न जाने किधर जा रहा था।

बिछुड़ने के समय प्रेम और प्रबल हो उठता है। गोरा के प्रति विनय का प्रेम कितना बड़ा और प्रबल है, आज उस प्रेम पर आघात लगने से ही विनय इसका अनुभव कर सका।

घर पहुँचकर रात के अंधकार और कमरे के सूनेपन के कारण विनय को बहुत ही अटपटा लगने लगा। एक बार वह गोरा के घर जाने के लिए बाहर भी निकल आया; किंतु गोरा के साथ आज की रात उसका हार्दिक मिलन हो सकेगा ऐसी उम्मीद वह नहीं कर सका, और फिर कमरे में लौटकर थका हुआ-सा बिस्तर पर लेट गया।

दूसरे दिन सुबह उठने पर उसका मन कुछ हल्का था। रात को कल्पना में अपनी वेदना को उसने बहुत अनावश्यक तूल दे दिया था.... अब उसे ऐसा नहीं जान पड़ा कि गोरा से दोस्ती और परेशबाबू के परिवार में मेल-जोल में कहीं कोई एकांत विरोध है। ऐसी कौन-सी बड़ी बात थी, यह सोचकर विनय को कल रात की अपनी बेचैनी पर हँसी आने लगी।

कंधे पर चादर डालकर लपकता हुआ विनय गोरा के घर जा पहुँचा। उस समय गोरा निचले कमरे में बैठा अखबार पढ़ रहा था। अभी विनय सड़क पर ही था कि गोरा ने उसे देख लिया, लेकिन आज विनय के आने पर भी उसकी नज़र अख़बार से नहीं हटी। विनय ने आते ही बिना कुछ कहे गोरा के हाथ से अख़बार छीन लिया।

गोरा ने कहा, "मुझे लगता है आप गलती कर रहे हैं- मैं गौरमोहन हूँ- कुंसंस्कार में आकंठ डूबा हुआ हिंदू।"

विनय बोला, "भूल शायह तुम्हीं कर रहे हो। मैं हूँ श्रीयुत विनय.... उन्हीं गौर मोहनजी का कुसंस्कारी बंधु।"

गोरा, "किंतु गौरमोहन ऐसा बेशर्म है कि अपने कुसंस्कारो के लिए कभी किसी के आगे लज्जित नहीं होता।"

विनय, "विनय भी ठीक वैसा ही है। इतना ही फर्क है कि वह अपने कुसंस्कारों के कारण चिढ़कर दूसरों पर आक्रमण करने नहीं जाता।"

देखते-ही-देखते दोनों दोस्तों में गरमा-गरम बहस छिड़ गई। मुहल्ले-भर के लोगों को पता लग गया कि गोरा से विनय का साक्षात् हो गया है।

गोरा ने पूछा, "परेशबाबू के घर तुम जो आते-जाते हो, यह बात उस दिन मुझसे छिपाने की क्या ज़रूरत थी?"

विनय, "न कोई ज़रूरत थी, न मैंने छिपाई.... न ही आता-जाता था इसीलिए वैसा कहा। तब से कल पहली बार उनके घर में गया था।"

गोरा, 'मुझे भय है कि तुम अभिमन्यु की तरह प्रवेश करने का रास्ता ही जानते हो, निकलने का रास्ता नहीं जानते।"

विनय, "हो सकता है- शायद जन्म से ही मेरा वैसा स्वभाव है। जिन पर श्रध्दा करता हूँ या जिन्हें चाहता हूँ उनका त्याग नहीं कर सकता। मेरे इस स्वभाव का तुम्हें भी पता है।"

गोरा, "तो फिर अब से उनके यहाँ आना-जाना जारी रहेगा?"

विनय, "अकेले मेरा ही आना-जाना जारी रहगा, ऐसी तो कोई बात नहीं है। तुम्हारे भी तो हाथ-पैर हैं, तुम कोई अचल मूर्ति तो नहीं हो!"

गोरा, "मैं तो जाता हूँ और लौट आता हूँ। किंतु तुम्हारे विचारों से तो यही जान पड़ता है कि तुम यदि गए तो समझो चले ही जाओगे। गरम चाय कैसी लगी?"

विनय, "कुछ कड़वी तो लगी थी।"

गोरा, "तो फिर?"

विनय, "न पीना तो और भी कड़वा लगता।"

गोरा, "यानी समाज को मानना केवल शिष्टाचार को मानना है?"

विनय, "हमेशा नहीं। लेकिन देखो गोरा, समाज के साथ जब हृदय की ठन जाय तब मेरे लिए.... "

अधीर होकर गोरा उठ खड़ा हुआ, विनय को अपनी बात उसने पूरी नहीं करने दी। गरजकर बोला, "हृदय! समाज को तुम इतना छोटा, इतनाघ्घ्घ् मानते हो तभी बात-बात में तुम्हारे हृदय से उसका टकराव है। किंतु समाज पर आघात करने से उसकी चोट कितनी दूर तक पहुँचती है, अगर तुम यह समझ सकते, तो अपने इस हृदय की चर्चा करते तुम्हें लज्जा आती। परेशबाबू की लड़कियों के मन को थोड़ी-सी ठेस पहुँचाते भी तुम्हें बहुत तकलीफ होती है; किंतु तुम्हें तकलीफ होती है इस ज़रा-सी बात को लेकर क्या तुम सारे देश को पीड़ा पहुँचाने को तैयार हो!"

विनय बोला, "तो फिर सच्ची बात कहूँ, भाई! अगर कहीं एक प्याला चाय पीने से देश को पीड़ा पहुँचती है तो उस पीड़ा से देश का भला ही होगा। उसे बचाने की कोशिश करना देश को अत्यंत दुर्बल बना देना होगा-बाबू बना देना होगा।"

गोरा, "महाशयजी, ये सब दलीलें रहने दो.... यह समझिए कि मैं एकदम भोला हूँ। लेकिन ये सब अभी की बातें नहीं हैं बीमार बच्चा जब दवा नहीं खाना चाहता तब माँ बीमार न होने पर भी स्वयं दवा खाकर उसे यह दिखाना चाहती है कि तुम्हारी और मेरी हालत एक-जैसी है। यह दलील की बात नहीं है, प्यार की बात है। यह प्यार न हो तो दलीलें चाहे जितनी हों, बेटे से माँ का संबंध नहीं रहता, और उस स्थिति में सब काम बिगड़ जाता है। मैं भी उस एक प्याला चाय को लेकर बहस नहीं कर रहा हूँ, लेकिन देश से कट जाना मैं सह नहीं सकता। चाय न पीना उससे कहीं कम कठिन है, और परेशबाबू की लड़कियों के मन को ठेस पहुँचाने की बात तो उससे भी छोटी है। सारे देश के साथ एकात्मक भाव से मिल जाना ही हमारी आज की अवस्था में सबसे

बड़ा और मुख्य काम है। जब वह मिलन हो जाएगा, तब चाय पीने या न पीने की दलीलों का निवारण तो बात-की-बात में हो जाएगा।"

विनय, "तब तो मालूम पड़ता है, मुझे चाय का दूसरा प्याला मिलने में अभी बहुत देर है!"

गोरा, "नहीं, अधिक देर करने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन विनय, मेरे ही साथ क्यों? हिंदू-समाज की और बहुत-सी चीज़ों के साथ-साथ मुझे भी छोड़ देने का समय आ गया है। नहीं तो परेशबाबू की लड़कियों के मन को ठेस लगेगी।"

इसी समय अविनाश आ पहुँचा। अविनाश गोरा का शिष्य है। गोरा के मुँह से वह जो कुछ सुनता है उसे अपनी बुध्दि के कारण छोटा और अपनी भाषा के द्वारा विकृत करके चारों ओर दोहराता फिरता है। गोरा की बात जिन लोगों की समझ में नहीं आती अविनाश की बात वे बड़ी आसानी से समझ लेते हैं और उसकी तारीफ भी करते हैं।

अविनाश को विनय के प्रति बड़ी ईष्या है। इसलिए मौका मिलते ही वह विनय के साथ बच्चों की तरह बहस करने लग जाता है। विनय उसकी मूढ़ता पर बहुत अधीर हो उठता है, तब गोरा अविनाश का पक्ष लेकर स्वयं विनय से उलझ पड़ता है। अविनाश समझता है कि उसकी ही दलीलें गोरा के मुँह से निकल रही हैं।

अविनाश के आ जाने से गोरा से मेल करने की विनय की कोशिश में रुकावट पड़ गई। वह उठकर ऊपर चला गया। आनंदमई भंडारे के सामने बरामदे में बैठी तरकारी काट रही थीं।

आनंदमई ने कहा, "बड़ी देर से तुम लोगों की आवाज़ सुन रही थी। बड़े सबेरे निकल पड़े- नाश्ता तो कर लिया था?"

और कोई दिन होता तो विनय कह देता, "नहीं, अभी नहीं किया", और आनंदमई के सामने जा बैठने से उसके नाश्ते की व्यवस्था हो जाती। किंतु आज उसने कहा, "नहीं माँ, कुछ खाऊँगा नहीं- खाकर ही निकला था।"

गोरा के सामने अपना अपराध बढ़ाने का उसका मन नहीं था। परेशबाबू के साथ उसके मेल-जोल के लिए ही अभी तक गोरा ने उसे क्षमा नहीं किया और उसे मानो

कुछ दूर करके रख है, यह अनुभव करके मन-ही-मन उसे दुख हो रहा था। जेब से चाकू निकालकर वह भी आलू छीलने लग गया।

पन्द्रह मिनट बाद नीचे जाकर उसने देखा, गोरा अविनाश को साथ लेकर कहीं चला गया है। बहुत देर तक विनय चुपचाप गोरा के कमरे में बैठा रहा। फिर अख़बार लेकर अनमना-सा विज्ञापन देखता रहा। फिर एक लंबी साँस लेकर वह भी बाहर निकल गया।

विनय का मन दोपहर को फिर गोरा से मिलने के लिए बेचैन हो उठा। गोरा के सामने झुक जाने में कभी उसे संकोच नहीं हुआ। लेकिन अपना अभिमान न भी हो, तो दोस्ती का तो एक अभिमान होता है, उसे भुला देना आसान नहीं होता है। परेशबाबू के यहाँ जाने से गोरा के प्रति इतने दिनों की उसकी निष्ठा में कुछ कमी हुई है, ये सोचकर वह स्वयं को अपराधी-सा अनुभव कर रहा था अवश्य, किंतु इसके लिए गोरा उसका मज़ाक-भर करेगा या डाँट-फटकार लेगा, यहीं तक उसने सोचा था। गोरा ऐसे उसे बिल्कुल दूर रखने का प्रयास करेगा, इसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी। घर से थोड़ी दूर जाकर विनय फिर लौट आया। कहीं दोस्ती का फिर अपमान न हो, इस भय से वह गोरा के घर नहीं जा सका।

दोपहर को भोजन करके गोरा को चिट्ठी लिखने के विचार से वह कागज़-कलम लेकर बैठा। बैठकर, बिना कारण यह सोचा कि कलम भौंडी है,और चाकू लेकर धीरे-धीरे बड़े यत्न से उसे गढ़ने लगा। इसी समय नीचे से पुकार सुनाई दी, "विनय!" विनय कलम रखकर तेज़ी से नीचे दौड़ा और बोला, "आइए महिम दादा, ऊपर आइए!"

ऊपर के कमरे में आकर महिम विनय की खाट पर बैठ गए और कमरे की सब चीजों का एक बार अच्छी तरह निरीक्षण करके बोले, "देखो विनय, मैं तुम्हारा घर जानता न होऊँ सो बात नहीं है- बीच-बीच में ख़बर लेता रहता हूँ ओर उधर ध्यान भी रहता है। लेकिन मैं जानता हूँ, तुम लोग आजकल के अच्छे लड़के हो, तुम्हारे यहाँ तंबाकू मिलने की उम्मीद नहीं है, इसीलिए जब तक ज़रूरी न हो.... "

हड़बड़कार विनय को उठते देख महिम ने कहा, "तुम सोच रहे हो, अभी बाज़ार से नया हुक्का खरीदकर मुझे तंबाकू पिलाओगे- ऐसी कोशिश न करना! तंबाकू न पिलाने को तो क्षमा कर सकूँगा, लेकिन नए हुक्कू पर अनाड़ी हाथ की तैयार की हुई चिलम बर्दाश्त नहीं होगी।"

इतना कहकर महिम ने खाट पर से पंखा उठाकर अपनी हवा करना शुरु किया और बोले, "आज रविचार के दिन की नींद मिट्टी करके जो तुम्हारे पास आया हूँ, उसका कारण है। मुझ पर एक उपकार तुम्हें करना ही होगा।"

विनय ने पूछा, "कैसा उपकार?"

महिम बोले, "पहले वायदा करो, तब बताऊँगा!"

विनय, "मेरे वश की बात हो तभी तो।"

महिम, "केवल तुम्हारे वश की ही बात है। और कुछ नहीं, तुम्हारे एक बार 'हां' कहने से ही हो जाएगा।"

विनय, "आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? आप तो जानते हैं, मैं घर का ही आदमी हूँ- कर सकने पर आपका काम नहीं करूँगा यह कैसे हो सकता है?"

महिम ने जेब से एक दौना पान निकालकर दो पान विनय की ओर बढ़ाए और बाकी अपने मुँह में रख लिए। चबाते-चबाते बोले, "अपनी शशिमुखी को तो तुम जानते ही हो। देखने-सुनने में ऐसी बुरी भी नहीं है- यानी अपने बाप पर नहीं गई। उम्र यही दस के आस-पास होगी। ब उसे किसी अच्छे पात्र को सौंपने का समय हो गया है। किस अभागे के हाथ पड़ेगी, यह सोच-सोचकर मुझे तो रात-भर नींद नहीं आती।"

विनय बोला, "घबराते क्यों हैं, अभी तो समय है।"

महिम, "तुम्हारी अपनी कोई लड़की होती तो समझते कि क्यों घबराता हूँ! उम्र तो दिन बीतने से अपने-आप बढ़ जाती है, लेकिन पात्र तो अपने-आप नहीं मिलता! इसलिए ज्यों-ज्यों दिन बीत रहे हैं। मन उतना ही और बेचैन होता जाता है। अब तुम कुछ आसरा दो तो.... खैर, दो-चार दिन इंतज़ार भी किया जा सकता है।"

विनय, "मेरी तो अधिक लोगों से जान-पहचान नहीं है। बल्कि एक तरह से कह सकता हूँ कि कलकत्ता-भर में आप लोगों का घर छोड़कर और किसी का घर नहीं जानता.... फिर भी खोज करके देखूँगा।"

महिम, "शशिमुखी का स्वभाव तो जानते ही हो।"

विनय, "जानता क्यों नहीं? जब वह छोटी-सी ही थी तभी से देखता आ रहा हूँ। बड़ी अच्छी लड़की है।"

महिम, "तब फिर ज्यादा दूर खोजने की क्या जरूरत है, भैया! लड़की को तुम्हारे ही साथ सौंपूँगा।"

घबराकर विनय ने कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं?"

महिम- "क्यों, बुरा क्या कह रहा हूँ। हम लोगों से तुम्हारा कुल ज़रूर कहीं ऊँचा है, लेकिन इतना पढ़-लिखकर भी तुम लोग अगर ये बातें मानो तो कैसे चलेगा!"

विनय, "नहीं-नहीं, कुल की बात नहीं है, लेकिन उम्र तो.... "

महिम, "क्या बात है! शशि की उम्र क्या कम है? हिंदू घर की लड़की तो मेम साहब नहीं होती- समाज को यों उड़ा देने से तो नहीं चलेगा!"

महिम सहज ही छोड़ने वाले आसामी नहीं थे। उन्होंनें विनय को मजबूर कर दिया। अंत में विनय ने कहा, "मुझे थोड़ा सोचने का समय दीजिए!"

महिम, "तो मैं कौन सा आज ही दिन पक्का किए दे रहा हूँ।"

विनय, "फिर भी, घर के लोगों से तो.... "

महिम, "हाँ, सो तो है। उनकी राय तो लेनी ही होगी। तुम्हारे काका महाशय जब मौजूद हैं तो उनकी राय के बिना कैसे कुछ हो सकता है।"

कहते हुए जेब से उन्होंने पान का दूसरा दौना निकाला और सारे पान मुँह में रख लिए। फिर, यह समझकर कि बातचीत पक्की हो गई है, वह चले गए।

आनंदमई ने कुछ दिन पहले एक बार शशिमुखी के साथ विनय के विवाह की चर्चा बातों-ही-बातों में उठाई थी। लेकिन विनय ने मानो कुछ सुना ही नहीं। आज भी उसे यह प्रस्ताव कुछ संगत लगा हो ऐसा नहीं था, लेकिन बात मानो उसके मन तक पहुँच गई। सहसा उसके मन में विचार उठा,यह विवाह हो जाने से गोरा उसे आत्मीय के नाते कभी दूर नहीं रहेगा। विवाह को हृदय की वृत्तियों के साथ जोड़ने को वह अंग्रेज़ीपन कहकर इतने दिनों से उसका मज़ाक करता आया है, इसीलिए शशिमुखी से विवाह करने की बात उसे असंभव नहीं जान पड़ी। महिम के इस प्रस्ताव को लेकर गोरा के साथ परामर्श करने का एक अवसर निकल आया, इससे भी विनय को खुशी ही हुई। विनय ने चाहा, गोरा इस बात को लेकर उससे थोड़ा आग्रह करे। महिम के

आगे साफ हामी न भरने पर महिम ज़रूर ही गोरा से उस पर ज़ोर डलवायेगा, इस बारे में विनय को ज़रा भी संदेह नहीं था।

ये सब बातें सोचकर विनय के मन का क्लेश दूर हो गया। वह उसी समय गोरा के घर जाने के लिए तैयार होकर कंधे पर चादर डालकर बाहर निकल पड़ा। थोड़ी दूर जाने पर पीछे से आवाज़ सुनी, "विनय बाबू!" और जब मुड़कर देखा, सतीश उसे पुकार रहा है।

सतीश के साथ विनय फिर घर लौट आया। सतीश ने जेब से रूमाल की एक पोटली निकालते हुए पूछा, "इसमें क्या है, बताइए तो?"

जो ज़बान पर आया विनय ने कह दिया। अंत में उसके हार मानेन पर सतीश ने बताया- रंगून में उसके एक मामा रहते हैं- उन्होंने वहाँ का यह फल माँ को भेजा है; माँ ने उसी से पाँच-छह फल विनय बाबू को उपहार में भेजे हैं।

बर्मा का यह मैंगोस्टीन फल उस समय कलकत्ता में सुलभ नहीं था। इसी से विनय ने फलों को हिला-डुला और उलट-पुलटकर पूछा, "सतीश बाबू, यह फल खाया कैसे जाएगा"

विनय की इस अज्ञानता पर हँसते हुए सतीश ने कहा, "देखिए, दाँत से न काटिएगा- छुरी से काटकर खाया जाता है।"

थोड़ी देर पहले सतीश स्वयं फल को दाँतों से काटने की निष्फल चेष्टा करके घर के लोगों की हँसी का पात्र बन चुका था। इसीलिए विनय के अज्ञान परविज्ञ-जन की-सी गूढ़ हँसी हँसने से उसके मन की उदासी दूर हो गई।

असमान उम्र के दोनों दोस्तों में थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें होती रहीं। फिर सतीश ने कहा, "विनय बाबू, माँ ने कहा है, आपको समय हो तो एक बार आज हम लोगों के यहाँ आ जाएँ- आज लीला का जन्मदिन है।"

विनय ने कहा, "आज तो भई नहीं हो सकेगा- आज मुझे एक जगह और जाना है।"

सतीश, "कहाँ जाना है?"

विनय, अपने दोस्त के घर।"

सतीश, "आपके वही दोस्त?"

विनय, "हाँ!"

दोस्त के घर जा सकते हैं, पर हमारे घर नहीं जाएँगे, सतीश इसकी संगतता नहीं समझ सका; इसलिए और भी नहीं क्योंकि विनय के यह दोस्त सतीश को अच्छे नहीं लगे थे। वह तो मानो स्कूल के हेडमास्टर से भी अधिक रूखे आदमी हैं, उन्हें आर्गन सुनाकर कोई तारीफ पा सकेगा ऐसे व्यक्ति वह नहीं हैं। ऐसे आदमी के पास जाने का भी कोई प्रयोजन विनय को हो सकता है, यह बात ही सतीश को नहीं जँची। वह बोला, "नहीं,विनय बाबू, आप हमारे घर चलिए!"

बुलाए जाने पर भी वह परेशबाबू के घर न जाकर गोरा के घर ही जाएगा, मन-ही-मन विनय ने यह पक्का निश्चय कर लिया था। आहत बंधुत्व के अभिमान की वह उपेक्षा नहीं करेगा, गोरा की दोस्ती के गौरव को वह सबसे ऊपर रखेगा, उसने यही स्थिर किया था।

किंतु हार मानते उसे अधिक देर न लगी। दुविधा में पड़े-पड़े, मन-ही-मन आपत्ति करते-करते भी अंतत: वह सतीश का हाथ पकड़ कर 78 नंबर मकान की ओर चल पड़ा। किसी को बर्मा से आए हुए दुर्लभ फलों का हिस्सा भेजने का ध्यान रहे, इसमें जो अपनापन झलकता है, उसका मान न रखना विनय के लिए असंभव है।

परेशबाबू के घर के पास आकर विनय ने देखा, पानू बाबू और दूसरे कुछ अपरिचित लोग परेशबाबू के घर से बाहर आ रहे हैं। ये लीला के जन्मदिन पर दोपहर के भोज में निमंत्रित थे। पानू बाबू ने विनय को मानो देखा ही न हो, ऐसे भाव से आगे बढ़ गए।

घर में कदम रखते ही विनय ने खुली हँसी की ध्वनि और दौड़-भाग के शब्द सुने। सुधीर ने लावण्य की दराज़ की चाबी चुरा ली थी; इतना ही नहीं, वह उस सारे समाज में इस बात का भंडा-फोड़ करने की भी धमकी दे रहा था कि लावण्य ने दराज़ में एक कापी छिपा रखी है। जिसमें उस कवियश: प्रार्थिनी का उपहास करने के लिए ढेरों सामग्री है! जिस समय विनय ने उस रंगभूमि में प्रवेश किया उस समय इसी बात को लेकर दोनों पक्षों में लड़ाई चल रही थी।

उसे देखते ही लावण्य का गुट फौरन लोप हो गया। उनके हँसी-मज़ाक में हिस्सा लेने के लिए सतीश भी उनके पीछे दौड़ा। कुछ देर बाद सुचरिता ने कमरे में आकर कहा, "माँ ने आपको ज़रा देर बैठने के लिए कहा है, वह अभी आ रही है। बाबा ज़रा अनाथ बाबू के घर तक गए हैं, उन्हें भी लौटने में देर नहीं होगी।"

सुचरिता ने विनय का संकोच दूर करने के लिए गोरा की बात उठाई। हँसकर बोली, "जान पड़ता है आपके मित्र यहाँ फिर कभी नहीं आएँगे?"

विनय ने पूछा, **"क्यों?"**

सुचरिता ने कहा, "हम लोग पुरुषों के सामने आती हैं, बात करती हैं उन्हें यह देखकर ज़रूर अचंभा हुआ होगा। घर के काम-काज को छोड़कर और कहीं लड़कियों को देखना, शायद उन्हें अच्छा नहीं लगता।"

इसका उत्तर देने में विनय कठिनाई में पड़ गया। बात का प्रतिवाद कर सकता तो उसे खुशी होती, किंतु झूठ वह कैसे बोले? बोला, "गोरा की राय में लड़कियाँ घर के काम में पूरा मन न ला पाएँ तो उनके कर्तव्य की परिपाटी नष्ट होती है।"

सुचरिता ने कहा, "तब तो स्त्री-पुरुषों का घर और बाहर का पूरा बँटवारा कर लेना ही अच्छा होता है। पुरुषों को घर में घुसने देने से भी तो शायद उनका बाहर का कर्तव्य अच्छी तरह संपन्न नहीं होता। आपकी राय भी क्या अपने मित्र की राय जैसी है?"

अभी तक तो नारी-सिध्दांत के संधन में गोरा का मत ही विनय का मत रहा है। उसी को लेकर अख़बारों में वह लिखता भी रहा है। किंतु इस समय यह बात उसके मुँह से न निकल सकी कि उसका मत भी वही है। उसने कहा, "देखिए, इन सब मामलों में असल में हम सब आदतों के दास हैं। इसीलिए लड़कियों को बाहर आते देखकर मन में खटका-सा होता है। उसके बुरा लगने का कारण यह है कि वह अन्याय है या अनुचित है, यह तो हम ज़बरदस्ती सिध्द करना चाहते हैं। असल बात संस्कार की होती है, दलील तो केवल उपलक्ष्य भर होता है।"

सुचरिता ने कहा, **"जान पड़ता है, आपके दोस्त के संस्कार बड़े दृढ़ हैं।"**

विनय, "बाहर से देखने पर सहसा ऐसा ही जान पड़ता है। किंतु एक बात आप याद रखिए! वह जो हमारे देश के संस्कारों से चिपटे रहते हैं,उसका कारण यह नहीं कि वह उन संस्कारों को अच्छा समझते हैं। हम लोग देश के प्रति अंधी अश्रध्दा के कारण उसकी सभी प्रथाओं की अवज्ञा करने लगे थे, इसी अनर्थ के निवारण के लिए खड़े हुए हैं। वह कहते हैं, हमें पहले श्रध्दा और प्रेम के द्वारा देश को समग्र रूप से अपनाना होगा,उसके बाद स्वाभाविक स्वास्थ्य के नियम के अनुसार अपने-आप भीतर से ही सुधार का काम होने लगेगा।"

सुचरिता ने कहा, "अपने-आप होना होता तो इतने दिन क्यों नहीं हुआ?"

विनय, "नहीं हुआ, उसकी वजह यह है कि अब तक हम देश के नाम पर समूचे देश को, जाति के नाम पर समूची जाति को एक मानकर नहीं देख सके। फिर हमने अपनी जाति पर अगर अश्रध्दा नहीं की तो श्रध्दा भी नहीं की- यानी उसे ठीक से समझा ही नहीं, इसलिए उसकी शक्ति भी सुप्त रही। जैसे एक रोगी की ओर देखे बिना, उसे बिना दवा-दारू और बिना पथ्य के एक ओर हटा दिया गया था, अब उसे दवाखाने में लाया ज़रूर गया है, किंतु डॉक्टर की उस पर इतनी अश्रध्दा है कि सेवा-शुश्रूषा साध्य लंबे इलाज की बात सोचने का भी धीरज उसमें नहीं है- उसे यही लगता है कि एक-एक करके रोगी के अंग कफ फेंके जाएँ! ऐसी अवस्था में मेरा दोस्त डॉक्टर कहता है, अपने इस परम आत्मीय को इलाज के नाम पर काट-कूटकर फेंक दिया जाय, मैं यह नहीं सह सकता। मैं अब इस अंग-विच्छेद को बिल्कुल बंद करके पहले अनुकूल पथ्य देकर इसके भीतर की जीवनी-शक्ति को जगाऊँगा। उसके बाद काटने की यदि ज़रूरत होगी तो रोगी उसे सह सकेगा, और शायद बिना काटे भी वह अच्छा हो जाएगा। गोरा कहते हैं, हमारे देश की वर्तमान स्थिति में गंभीर श्रध्दा ही सबसे बड़ा पथ्य है- इस श्रध्दा के अभाव के कारण हम देश को समग्र भाव से जान नहीं पाते-और जान न पाने के कारण उसके लिए जो भी सुव्यवस्था करते हैं वह सुव्यवस्था साबित होती है। देश से प्रेम न हो तो उसे अच्छी तरह जानने का धैर्य नहीं होता; और उसे जाने बिना उसका भला करना चाहने पर भी भला होता नहीं है।"

थोड़ा-थोड़ा बराबर छेड़ते रहकर सुचरिता ने गोरा-संबंधी चर्चा को बंद नहीं होने दिया। विनय भी गोरा की ओर से जो-कुछ कह सकता था सुलझा-समझाकर कहता रहा। ऐसी अच्छी दलीलें, ऐसे अच्छे दृष्टांत देकर और इतनी सुलझाकर उसने मानो पहले कभी यह बात नहीं रखी; गोरा स्वयं भी अपनी राय को इतनी सफाई और स्पष्टता से प्रकट कर सकता कि नहीं इसमें संदेह है। बुध्दि द्वारा विवेचन की इस अपूर्व उत्तेजना पर मन-ही-मन उसे आनंद अनुभव होने लगा और उस आंनद से उसका चेहरा दीप्त हो उठा।

विनय ने कहा, "देखिए, शास्त्रों में कहा गया है, 'आत्मनां विध्दि'- अपने को जानो! नहीं तो मुक्ति का कोई साधन नहीं है। मैं आप से कहता हूँ,मेरे बंधु गोरा में भारतवर्ष का यही आत्म-बोध प्रत्यक्ष रूप से आविर्भूत हुआ है। मैं उन्हें आम आदमी मान ही नहीं सकता। जब हम सबका मन ओछे आकर्षण, नएपन के लालच में पड़कर बाहर

की ओर बिखर गया, तब वही एक अकेला व्यक्ति इस सारे पागलपन के बीच स्थिर खड़ा सिंह-गर्जनो के साथ वही मंत्र देता रहा.... "आत्मानं विध्दि'।"

यह चर्चा और भी काफी देर तक चल सकती थी-सुचरिता भी बड़ी लगन से सुन रही थी। किंतु साथ के किसी कमरे में सहसा सतीश ने चिल्ला-चिल्लाकर पढ़ना शुरू किया :

बोलो न कटु वचन बिना किए विचार

जीवन सवप्न-समान है, माया का संसार!

बेचारा सतीश घर के अतिथि-आगंतुकों के सामने अपनी विधा दिखाने का कोई मौक़ा ही नहीं पाता। लीला तक अंगेज़ी कविता सुनकार सभी का मनोरंजन कर सकती है, किंतु सतीश को वरदासुंदरी कभी नहीं बुलातीं। पर हर मामले में लीला के साथ सतीश की होड़-सी रहती है। किसी प्रकार भी लीला को नीचा दिखाना सतीश के जीवन का पहला सुख है। विनय के सामने लीला की परीक्षा हो गई; उस समय बुलाए न जाने के कारण सतीश उसे हराने की कोई कोशिश नहीं कर सका- कोशिश करता भी तो वरदासुंदरी उसे उसी समय टोक देतीं। इसी से वह आज पास के कमरे में मानो अपने-आप ऊँचे स्वर से काव्य-पाठ करने लगा था। सुनकर सुचरिता अपनी हँसी न रोक सकी।

उसी समय अपनी चोटी झुलाती हुई लीला कमरे में आकर सुचरिता के गले से लिपटकर उसके मान में कुछ कहने लगी। सतीश ने भी पीछे-पीछे दौड़ते हुए आकर कहा, "अच्छा लीला, बताओ तो 'मनोयोग' का मतलब क्या है?"

लीला ने कहा, "नहीं बताती।"

सतीश, "ए हे! नहीं बताती! यह कहो न कि नहीं जानती!"

सतीश को विनय ने अपनी ओर खींचते हुए पूछा, "तुम बताओ तो 'मनोयोग' के क्या माने हैं?"

गर्व से सिर उठाकर सतीश ने कहा, "मनोयोग माने- मनोनिवेश।"

सुचरिता ने जिज्ञासा की, "मनोनिवेश से तुम्हारा क्या आशय है?"

भला अपनों के सिवा कौन किसी को ऐसी मुसीबत में डाल सकता है! पर सतीश ने जैसे सवाल सुना ही न हो ऐसे उछलता-कूदता कमरे से बाहर चला गया।

परेशबाबू के घर से जल्दी ही छुट्टी लेकर विनय गोरा के घर जाने का निश्चय करके आया था। गोरा की चर्चा करते-करते उसके पास जाने की ललक भी उसके मन में प्रबल हो उठी। इसीलिए वह चार बजते जानकर जल्दी से कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ।

सुचरिता बोली, "आप अभी जाएँगे? माँ तो आपके लिए जल-पान तैयार कर रही है; थोड़ी देर और न बैठ सकेंगे?"

विनय के लिए यह प्रश्न नहीं, आदेश था। वह फिर बैठ गया।

रंगीन रेशमी परिधन में सज-धाजकर लावण्य आई और बोली, "दीदी, नाश्ता तैयार हो गया है, माँ ने छत पर चलने को कहा है।"

छत पर जाकर विनय को नाश्ते में जुट जाना पड़ा। वरदासुंदरी प्रथानुसार अपनी सब संतानों का जीवन-वृत्तांत सुनाने लगीं। ललिता सुचरिता को भीतर खींचकर ले गई। एक कुर्सी पर बैठकर लावण्य कंधे झुकाए लोहे की सलाइयों से बुनाई करने में लग गई। कभी उसे किसी ने कहा था- बुनाई के समय उसकी उँगलियों का संचालन बहुत सुंदर लगता है। तभी से लोगों के सामने बिना कारण बुनाई करने की उसकी आदत हो गई है।

परेशबाबू भी आ गए। साँझ हो चली थी। आज रविवार था, उपासना-गृह जाने की बात थी। वरदासुंदरी ने विनय से कहा, "आपत्ति न हो तो आप भी हम लोगों के साथ समाज में चलें?"

ऐसे में आपत्ति करना कैसे संभव था? दो गाड़ियों में बैठकर सब लोग उपासना-भवन गए। लौटते समय जब सब गाड़ी पर सवार हो रहे थे तब सुचरिता ने आचानक चौंककर संकेत कर कहा, "वह गौरमोहन बाबू जा रहे हैं!"

गोरा ने इन लोगों को देख लिया है, इसमें किसी को शक नहीं था। किंतु वह ऐसे भाव से तेज़ी से बढ़ गया मानो उसने उन्हें देखा न हो। गोरा के इस अशिष्टता के कारण विनय ने परेशबाबू के सम्मुख लज्जित होकर सिर झुका लिया। किंतु मन-ही-मन वह स्पष्ट समझ गया कि विनय को इस गुट में देखकर ही यों विमुख होकर गोरा

इतनी तेज़ी से चला गया। अब तक उसके मन में एक आनंद का जो प्रकाश हो रहा था वह सहसा बुझ गया। विनय के मन का भाव और उसका कारण सुचरिता फौरन समझ गई, और विनय-जैसे बंधु के प्रति गोरा की इस ज्यादती और ब्रह्मों के प्रति उसकी इस अनुचित अवज्ञा से उसे गोरा पर फिर क्रोध आ गया। गोरा का किसी तरह भी पराभव हो, उसका मन यही चाह उठा।

दोपहर को गोरा खाने बैठा तो आनंदमई ने धीरे-धीरे बात चलाई- "आज सबेरे विनय आया था। तुमसे नहीं मिला?"

थाली पर से ऑंख उठाए बिना ही गोरा ने कहा, "हाँ, मिला था।"

बहुत देर तक आनंदमई चुपचाप बैठी रही। उसके बाद बोलीं, "उसे रुकने को कहा था, किंतु वह अनमना-सा होकर चला गया।"

गोरा ने फिर कोई उत्तर नहीं दिया। आनंदमई ने कहा, "उसके मन को न जाने क्या दुख है गोरा, उसे मैंने कभी ऐसा नहीं देखा। मुझे कुछ अजीब-सा लग रहा है!"

गोरा चुपचाप खाता रहा। अत्यंत स्नेह के कारण ही आनंदमई मन-ही-मन गोरा से थोड़ा डरती थीं। अगर वह अपने मन की बात अपने-आप उनसे न कहता तो वह उसे मजबूर नहीं करती थी। और कोई दिन होता, तो इतने पर ही चुप हो जातीं। किंतु उनके मन में आज विनय के लिए बड़ा दर्द था, इसीलिए उन्होंने फिर कहा "देखो गोरा, एक बात कहूँ- नाराज़ मत होना! भगवान ने अनेक लोग बनाए हैं, लेकिन रास्ता सबके लिए केवल एक ही नहीं बनाया। विनय तुम्हें प्राणों से बढ़कर स्नेह करता है, इसलिए तुम्हारी ओर से सब-कुछ सह लेता है- लेकिन उसे तुम्हारे ही निर्देश पर चलना होगा, ऐसी ज़बरदस्ती करने का फल सुखकर नहीं होगा!!"

गोरा ने कहा, "माँ, और थोड़ा दूध ला देना तो!"

बात यहीं खत्म हो गई। भोजन के बाद आनंदमई चुपचाप तख्तपोश पर बैठकर सिलाई करने लगीं। लछमिया घर के किसी नौकर के दुर्व्यवहार की शिकायत में आनंदमई की दिलचस्पी जगाने की बेकार चेष्टा करके फर्श पर लेटकर सो गई।

चिट्ठी-पत्री में गोरा ने बहुत-सा समय बिता दिया। गोरा विनय पर नाराज़ है, आज सबेरे विनय यह स्पष्ट देख गया है। फिर भी वह इस नाराज़गी को मिटाने के लिए

गोरा के पास न आए, यह हो ही नहीं सकता। यही मानकर अपने सब कामों के बीच भी वह विनय के पैरों की ध्वनि के लिए कान लगाए था।

पर बड़ी देर तक भी विनय नहीं आया। गोरा लिखना छोड़कर उठने की सोच रहा था। कि तभी महिम कमरे में आ गए। आते ही कुर्सी पर बैठकर बोले, "शशिमुखी के ब्याह के बारे में क्या सोचा, गोरा?"

इस बारे में कभी कुछ गोरा ने सोचा ही नहीं था, इसलिए अपराधी-सा चुप खड़ा रहा।

पात्र का भाव बाज़ार में कितना बढ़ा हुआ है, और इधर घर में रुपए-पैसे की कितनी तंगी है, महिम ने यह सब बताकर गोरा को कुछ उपाय सोचने को कहा। गोरा सोचकर भी जब कोई हल न पा सका तब उन्होंने मानो इस चिंता-संकट से उसको मुक्त करने के लिए ही विनय की बात चलाई। हालाँकि इतना घुमा फिराकर बात करने की कोई ज़रूरत नहीं कि, किंतु मुँह से महिम चाहे जो कहें, मन-ही-मन गोरा से डरते थे।

इस प्रसंग से विनय की बात भी उठ सकती है, गोरा ने यह कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। बल्कि गोरा और विनय ने तय कर रखा था कि वे विवाह न करके अपना जीवन देश के लिए न्यौछावर कर देंगे। इसलिए गोरा ने कहा, "विनय ब्याह करेगा क्यों?"

महिम बोले, "क्या यही तुम लोगों का हिंदूपन है! हज़ार चुटिया रखो और तिलक लगाओ, साहिबी सिर पर चढ़कर बोलती हैं! शास्त्रों के अनुसार विवाह भी ब्राह्मण के लड़के का एक संस्कार है, यह तो जानते हो?"

आजकल के लड़कों की तरह महिम आचार भी नहीं तोड़ते, और शास्त्र की दुहाई भी नहीं देते। होटल में खाना खाकर बहादुरी दिखाने को भी वह ठीक नहीं समझते, और गोरा की तरह हमेशा श्रुति-स्मृति लेकर उलझते रहने को भी वह स्वस्थ आदमी का लक्षण नहीं मानते। किंतु 'यस्मिन् देशे सदाचार:'-गोरा के सामने शास्त्र की दुहाई न्हें देनी ही पड़ी।

अगर दो दिन पहले यह प्रस्ताव आया होता तो गोरा उसे एकबारगी अनसुना कर देता। किंतु आज उसे लगा कि बात एकदम उपेक्षा के योग्य नहीं है। कम-से-कम इस प्रस्ताव के कारण फौरन विनय के घर जाने का एक मौका तो मिल ही सकता है।

अंत में उसने कहा, "अच्छा, विनय का विचार क्या है, ज़रा समझ लूँ!"

महिम बोले, "उसमें समझने को क्या है? वह तुम्हारी बात को किसी तरह टाल नहीं सकता। वह मान जाएगा। तुम्हारा कहना ही काफी है।"

उसी दिन साँझ को गोरा विनय के घर जा पहुँचा। आँधी के समान उसके कमरे में प्रवेश करके उसने देखा, वहाँ कोई नहीं है। बैरा को बुलाकर पूछने पर पता चला कि बाबू 78 नंबर मकान में गए हैं। सुनकर गोरा का चित्त फिर विकल हो उठा। जिसके लिए आज सारा दिन गोरा का मन अशांत रहा, उस विनय को आजकल गोरा का ध्यान करने की भी फुरसत नहीं है! गोरा चाहे नाराज़ हो, चाहे दुखित हो; विनय की शांति और चैन में उससे कोई रुकावट नहीं पड़ती!

परेशबाबू के परिवार के विरुध्द, ब्रह्म-समाज के विरुध्द गोरा का मन बिल्कुल विषाक्त हो उठा। मन में एक तीखा आक्रोश लेकर वह परेशबाबू के घर की ओर चला। उसका मन हुआ, वहाँ कुछ ऐसी बात पैदा कर दे जिसे सुनकर उस ब्रह्म-परिवार के लोग जल उठें और विनय भी तिलमिलाकर रह जाए।

उसने परेशबाबू के घर पहुँचकर सुना, घर पर कोई नहीं है, सभी उपासना-भवन गए हैं उसने क्षण-भर के लिए सोचा, विनय शायद न गया हो- शायद इसी समय वह गोरा के घर की ओर गया हो।

वह वहाँ और न रुक सका। अपनी स्वाभाविक आँधी-सी चाल से वह भवन की ओर ही चला। द्वार के पास पहुँचते ही देखा, विनय वरदासंदरी के पीछे उनकी गाड़ी पर सवार हो रहा है- खुली सड़क के बीच बेशरम होकर पराए घर की लड़कियों के साथ एक गाड़ी में बैठ रहा है। मूढ़! नागपाश में इतनी जल्दी, इतनी आसानी में फँस गया? तब दोस्ती के लिहाज़ का अब कोई मतलब नहीं रहता। गोरा आँधी की तरह आगे बढ़ गया और गाड़ी के अंधेरे हिस्से में बैठा हुआ विनय चुपचाप रास्ते की ओर ताकता रह गया।

वरदासुंदरी ने समझा, आचार्य का उपदेश विनय के मन पर असर कर रहा है। इसीलिए आगे उन्होंने कोई बात नहीं की।

वरदासुंदरी ने समझा, आचार्य का उपदेश विनय के मन पर असर कर रहा है। इसीलिए आगे उन्होंने कोई बात नहीं की।

गोरा - Gora in Hindi

1. गोरा अध्याय
2. गोरा अध्याय
3. गोरा अध्याय
4. गोरा अध्याय
5. गोरा अध्याय
6. गोरा अध्याय
7. गोरा अध्याय
8. गोरा अध्याय
9. गोरा अध्याय
10. गोरा अध्याय
11. गोरा अध्याय
12. गोरा अध्याय
13. गोरा अध्याय
14. गोरा अध्याय
15. गोरा अध्याय
16. गोरा अध्याय
17. गोरा अध्याय
18. गोरा अध्याय
19. गोरा अध्याय
20. गोरा अध्याय